INDIAN STREAMS RESEARCH JOURNAL

ISSN: 2230-7850
IMPACT FACTOR : 5.1651 (UIF)
VOLUME - 7 | ISSUE - 6 | JULY - 2017

गढ़वालमें यात्रा–पथ और उनका विकास : एक ऐतिहासिक अध्ययन (औपनिवेशिक काल एवं उत्तर औपनिवेशिक काल के विशेष सन्दर्भ में)

डॉ. कैसर अली
शोध अध्येता हे. न. ब. (केन्द्रीय विश्वविद्यालय)
श्रीनगर, गढ़वाल, उत्तराखण्ड।

प्रस्तावना-

मध्य हिमालय में अवस्थित 'गढ़वाल' प्राचीन काल से केदारखण्ड (नौटियाल, एस0 एन0, 1994: 40/29),भूतेशगिरि (सन्तराम, 1924: 61), सपादलक्ष,खशदेश(एपिग्राफिया इण्डिका: 30)आदि नामों से जाना जाता था। केदारखण्ड में उल्लिखित गढ़वाल क्षेत्र की सीमा पूर्व में बौद्धाचल (वर्तमान बधाण–ग्वालदम क्षेत्र), पश्चिम में तमसा नदी (टौंस नदी), दक्षिण में गंगाद्वार (हरिद्वार), उत्तर में श्वैशान्त पर्वत हिमालय तक फैला है। इसकी लम्बाई 50 योजन (200 कोस), चौड़ाई 30 योजन (120 कोस) तक विस्तृत है। (नौटियाल, एस0 एन0, 1994: 40/27–29)यह क्षेत्र 29° 26'– 31° 28' उत्तर अक्षांश से लेकर 77° 49'– 80° 6' पूर्वी देशान्तर के मध्य लगभग 30,000 वर्ग कि0मी0 क्षेत्रफल में बसा है।

वर्तमान समय में यह क्षेत्र उत्तराखण्ड राज्य के प्रशासनिक इकाई के रूप में 'गढ़वाल' मंडल के नाम से जाना जाता है। 'गढ़वाल' मंडल के अन्तर्गत कुल सात जिले आते है, जिसमें देहरादून 3088 वर्ग किमी0, पौड़ी गढ़वाल 5329 वर्ग किमी0, टिहरी गढ़वाल 3642 वर्ग किमी0, उत्तरकाशी 8016 वर्ग किमी0, चमोली 8030 वर्ग किमी0, हरिद्वार 2360 वर्ग किमी0 और रुद्रप्रयाग 1984 वर्ग किमी0 सम्मिलित है। वर्तमान समय में 'गढ़वाल' मंडल उत्तराखण्ड के कुल क्षेत्रफल का 32,449 वर्ग किमी0 भू–भाग और प्रतिशतता के आधार पर 60.67% क्षेत्र फल है।(नवानी एवं रावत, 2010: 250–251) इसकी सीमा पूर्व में कुमाऊँ, पश्चिम में हिमाचल प्रदेश, उत्तर में तिब्बत और दक्षिण में सहारनपुर एवं बिजनौर जिले से लगती है।(नेगी, शंतन सिंह, 1988: 17)

इस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति काफी विविधतापूर्ण है। विश्व प्रसिद्ध चारधाम (गंगोत्री, यमुनोत्री, केदारनाथ, बद्रीनाथ) के साथ जहाँ सम्पूर्ण गढ़वाल में अत्यधिक ऊँचें पर्वत शिखरों की लम्बी श्रृंखलाएँ हैं वही सघन वन क्षेत्रफल के साथ पवित्र जीवनदायिनी नदियों अलकनन्दा, भागीरथी, मंदाकिनी, यमुना, रामगंगा, टौंस, धौली, पिण्डर, नयार, भिलंगना इत्यादि का जाल सा बिछा है। यह क्षेत्र प्राचीन काल से ही विभिन्न स्थानीय स्वायत्तशासी प्रजातियों के अधीन शासित रहा जिसमें कोल, किरात, खस, कुलिन्द, यौधेय, नाग, पौरव, शक एवं कुषाण, हूण, कत्यूरी, पँवार आदि प्रमुख है।(नेगी, शंतन सिंह, 1988: 18)

गढ़वाल में यात्रा–पथ का विकास यहाँ पर निवास करने वाली प्रजातियों के इस क्षेत्र में आवागमन के साथ क्रमिक रूप से विकसित हुआ है। ऐतिहासिक कालक्रम पर दृष्टिपात् करने पर यह समीचीन होता है कि प्रारम्भ में यह भू–भाग अत्यधिक घने जंगलों, अलंघ्य एवं दुरारोह पवर्तों, गहरी खाइयों, सदानीरा नदियों और अत्यधिक विषम जलवायु से युक्त रहा। कालान्तर में जब विभिन्न खानाबदोश प्रजातियों ने इस ओर अपने कदम बढ़ाये तो सर्वप्रथम यात्रा–पथ की आवश्यकता महसूस की गई होगी किन्तु इस ओर सीमित मानवीय गतिविधियों के कारण यात्रा–पथ अपनी प्रारम्भिक अवस्था में था। तत्कालीन परिप्रेक्ष्य में एक जगह से दूसरी जगह आवागमन मुख्यतः स्थलीय एवं जलीय मार्ग से ही संभव था। गढ़वाल जैसे पर्वतीय भू–भाग में यद्यपि छोटी–बड़ी नदियों का जाल सा बिछा है लेकिन नौकायन आदि गतिविधियों के लिए सुगम्य एवं अत्यधिक सुरक्षित न होने के कारण स्थलीय मार्ग ही यात्रा–पथ के रूप में अधिक प्रचलित रहा। अतः इन कारणों से अपनी प्रारम्भिक अवस्था में गढ़वाल का यह भू–भाग यात्रा के लिए प्रमुखतया स्थल पर ही निर्भर था।

गढ़वाल जैसे पर्वतीय भू–भाग का मैदानी क्षेत्रों की तरह समतल न होना, पूर्णतया मिट्टी युक्त धरातल का अभाव, यत्र–तत्र भूस्खलन एवं क्षुद्र तथा स्थूल पत्थरों आदि ने भी इस क्षेत्र में यात्रा–पथ के निर्माण में अनेकों अवरोध उत्पन्न किए। इस कारण यहाँ अत्यधिक लम्बे समय तक यात्रा–पथ अपने विकसित रूप में अस्तित्व में नहीं था। आरम्भिक ऐतिहासिक वर्णनों से पता चलता है कि गढ़वाल का यह क्षेत्र यात्रा–पथ के लिए पगडंडियों, कच्चे रास्तों अथवा संकरे मार्गों के अतिरिक्त और कुछ न था। बाद के समय में मानवीय क्रियाकलापों के फलस्वरूप आवागमन एवं एक स्थान से दूसरे स्थान पर संचरण हेतु यात्रा–पथ की

आवश्यकता महसूस की गई। प्रारम्भ में इस भू–भाग में मानव समूह बनाकर रहता था और सुरक्षा कारणों से प्रवजन भी सामूहिक किया जाता था। इन मानव समूह के साथ–साथ इनके अपने पालतू पशु इत्यादि भी होते थे जिन्हें सुरक्षा की दृष्टि से समूह में लेकर गमन करना पड़ता था। ये समूह यायावर जीवनशैली और उपर्युक्त शरणस्थलों की खोज में खानाबदोश जीवन व्यतीत करते थे। सभी ऋतुओं में से विशेषकर वर्षा ऋतु में नदी–नालों आदि को पारकर ऐसे स्थानों पर पहुँचने हेतु यात्रा–पथों की आवश्यकता महसूस की गई, अतः इन सब कारणों से कालान्तर में यात्रा–पथ का विकास शुरू हुआ।

उत्तराखण्ड यात्रा का सर्वप्राचीन वर्णन महाभारत के वनपर्व में मिलता है। तीर्थयात्रा–विधि के साथ, उसमें मुख्यतः बदरिकाश्रमीय यात्रा–मार्गों के सन्दर्भ भी मिल जाते हैं। इसके अनुसार पाण्डवों की तीर्थयात्रा 'गंगाद्वार' से आरम्भ हुई। इसके अलावा यात्रा–पथ गंगातट का अनुसरण करता हुआ कनखल, श्रीनगर, गन्धमादन पर बदरी एवं श्वेतपर्वत की ओर बढ़ता था। प्रधान मार्ग से एक मार्ग श्रीनगर वा देवप्रयाग होकर 'यमुनाप्रभव (यमुनोत्तरी) को जाता था। दूसरा रूद्रप्रयाग अथवा लालसाँगा–गोस्थल से भृगुतुंग की ओर। उक्त यात्रा–पथ उत्तराखण्ड के गढ़वाल क्षेत्र में ही स्थित है। हरिवंशपुराण के भविष्यपर्व में केशव द्वारा कैलास–मानस तक यात्रा–मार्ग बने होने की बात कही गई है जिससे तीर्थ–यात्री एवं व्यापारी दोनों निर्बाध रूप से आवागमन करते थे। (कठोच, यशवन्त सिंह, 2006: 45–46)

महा–हिमालय में अत्यन्त ऊँचाई पर स्थित अनेक दुर्गम गिरिद्वार (घाट) भी हैं जिनसे होकर हूणदेश में प्रवेश के मार्ग हैं। (कठोच, यशवन्त सिंह, 2006: 11) इन मार्गों के द्वारा स्थानीय जनजातियाँ प्राचीनकाल से ही व्यापारिक–आर्थिक क्रियाकलापों का सम्पादन करती रही हैं, जिस कारण से इनकी आजीविका का प्रबन्ध हो पाता है। किन्तु ये व्यापारिक यात्रा–पथ अत्यन्त खतरनाक एवं कठिन माने जाते रहे है।

'शिवप्रसाद डबराल' ने अपनी पुस्तक 'उत्तराखण्ड का इतिहास' में वर्णन किया है कि ब्रिटिश शासन से पूर्व गढ़देश में प्रवेश करना अपेक्षाकृत कठिन था। उनके अनुसार मुस्लिम इतिहासकारों ने बार–बार इस प्रदेश की दुर्गमता का उल्लेख किया है, जिसके कारण आक्रान्ताओं की सेना को गढ़देश पर अधिकार करने में असफलता मिलती थी। (डबराल, शिवप्रसाद, 1971: 43) सुल्तान मुहम्मद बिन तुगलक के समय कराचिल अभियान का वर्णन करते हुए डबराल गढ़देश के यात्रा–पथ का विश्लेषण कर बताते हैं कि चण्डीघाट से लक्ष्मणझूला, देवप्रयाग, श्रीनगर होकर देवलगढ़ जाने के पैदल मार्ग में बन्दरभेल का संकीर्ण मार्ग आता है, जिस पर नाईमोहन से नौढ़ाखाल की साढ़े चार मील की खड़ी चढ़ाई आज भी पैदल यात्रियों के लिए दुरारोह है।(डबराल, शिवप्रसाद, 1971: 123) इसी के साथ एक अन्य स्थान पर डबराल लिखते है कि कराचिल में पर्वतश्रेणी के पाद प्रदेश में जिदिया (चँडिया, चँडी) नामक नगर था तथा एक दूसरा नगर देवलगढ़ या गढ़वाल था, जो पर्वत के ऊँचे भाग में बसा था। राज्य में प्रवेश करने का एक ही मार्ग था, जो अति संकीर्ण था। इस मार्ग से नीचे की ओर नदी की गहरी घाटी थी तथा ऊपर की ओर सीधा खड़ा पर्वत था। मार्ग इतना संकरा था कि उससे होकर केवल एक ही अश्वारोही एक बार आगे बढ़ सकता था। (डबराल, शिवप्रसाद, 1971: 119–120) इसी तरह तैमूर के गढ़देश पर आक्रमण के समय भाबर से पर्वतीय भाग में प्रवेश करने के निम्न सात प्रमुख मार्गों का वर्णन भी मिलता है– (डबराल, शिवप्रसाद, 1971: 134)

1 – वर्तमान कोटद्वार के पास खोहनदी की घाटी से होकर
2 – वर्तमान चौकीघाटा के पास मालिनीनदी की घाटी होकर
3 – वर्तमान लालढांग के पास पाण्डुवालासोत होकर
4 – चण्डीघाट से लक्ष्मणझूला के पास गंगाजी की घाटी होकर
5 – पश्चिमी गढ़देश (दून) में प्रवेश के लिए वर्तमान मोहनघाटी होकर
6 – वर्तमान तिमली घाटी होकर
7 – धुर पश्चिम में यमुना की घाटी होकर

विनयपत्रिका के एक पद से विदित होता है कि 'गोस्वामी तुलसीदासजी' ने, जिनकी जीवनावधि 1532 ई0 से 1623 ई0 तक मानी जाती है (अहमद, लईक, 2011: 48), बदरीनाथ की यात्रा की थी। वे अजयपाल या सहजपाल के राज्यकाल में इस प्रदेश में आए थे। विनयपत्रिका के उक्त पद से विदित होता है कि यात्रामार्ग मनभंग, चित्तभंग, क्षुरधार और खड्गधार नामक तीखी चढ़ाईवाली धारों (डांडों) से होकर आगे बढ़ते थे। (डबराल, शिवप्रसाद, 1971: 563)

मुग़ल बादशाह शाहजहाँ के समय नज़ावत खाँ ने गढ़देश पर आक्रमण करने का असफल प्रयास किया किन्तु रानी कर्णावती की कूटनीति और यात्रा–मार्ग की कठिनाइयों के कारण नज़ावत खाँ यत्र–तत्र अपनी जान बचाकर भागने में सफल हो पाया। (नेगी, शंतन सिंह, 1988: 139) बाद में औरंगज़ेब के शासनकाल में भी गढ़वाल राज्य पर आक्रमण किया गया इस अभियान में शाही सेना ने अनगिनत मार्गनिर्माताओं को चट्टानें हटाकर मार्ग चौरस करने तथा संकीर्ण पगडण्डियों को चौड़ा बनाने हेतु भेजा गया। (बर्नियर, एफ0, 1891: 93) अतः मुग़ल शासक औरंगज़ेब के शासनकाल तक भी गढ़देश के यात्रा–पथ विकसित अवस्था में न थे। संभवतः गढ़नरेश गढ़राज्य में प्रवेश के मार्गों को दुर्गम बनाए रखने के पक्ष में थे। इससे राज्य पर वाह्य आक्रमण की आशंका कम रहती थी। गोरखा आक्रमण से पूर्व सलाण, भाबर और दून पर अधिकार कर लेने पर भी मार्गों की दुर्गमता के कारण मुग़लसेना गढ़राज्य के भीतरी भागों में प्रविष्ट न हो सकी थी। (डबराल, शिवप्रसाद, 1971: 494) इसके बाद गढ़राज्य पर गोरखा शासनकाल में भी यात्रा–पथ पर कोई ध्यान नहीं दिया गया लेकिन 02 दिसम्बर 1815 ई0 में संगौली की सन्धि के द्वारा गढ़वाल से गोरखों का आधिपत्य समाप्त हुआ (श्रीवास्तव, काशी प्रसाद, 2010: 119) और औपनिवेशिक शासन के अधीन गढ़वाल दो राज्यों

क्रमशः टिहरी और ब्रिटिश गढ़वाल में विभाजित हुआ जिसमें अंग्रेजों ने टिहरी रियासत का शासक गढ़नरेशों के वंशज सुदर्शनशाह को स्वीकार किया।

औपनिवेशिक शासनकाल के अन्तर्गत आरम्भिक अंग्रेज प्रशासकों ने अपने अधीन प्रशासित ब्रिटिश गढ़वाल में यात्रा–पथ के विकास के सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण प्रयोग किए गए। यहाँ के यात्रा–पथ के बारे में ट्रेल, ब्रेकट, फ्रेजर, पौ, एटकिंसन, ओकले, वाल्टन आदि ने बहुमूल्य जानकारी दी है। (बेंजवाल, रमाकान्त, 2002: 121) अंग्रेज प्रशासक 'जी0 डब्ल्यू0 ट्रेल' जिसकी नियुक्ति जुलाई 1815 ई0 में हुई, तत्कालीन संदर्भ में यात्रा–पथ पर लिखते हैं कि 'ये बगली सड़कें, और वास्तव में सभी सड़कें, जहाँ तक संभव है, किसी न किसी नदी या सरिता के किनारे चलती हैं और इन किनारों से तभी हटती हैं जब सामने खड़ी चट्टान रास्ता रोक देती है तथा किसी भी तरीके से इसे पार करना मुश्किल हो जाता है। इस तरह के अवरोधों से, जो यहाँ जब–तब मिल जाते हैं, निपटने के लिए या तो पुल बना कर नदी पार कर दूसरे किनारे से जाते हैं या उसी चट्टान पर तख्ते, बल्लियों और खूंटों से रास्ता बना लिया जाता है। लेकिन ऐसा तभी किया जाता है जब चट्टान पर प्राकृतिक दरार या शिला–फलक उपलब्ध हो। जहाँ इस अवरोध को पार करना अपरिहार्य हो, वहाँ सामान्यतः पास ही कुछ चक्कर काट कर रास्ता निकाल लिया जाता है लेकिन ये रास्ते आमतौर पर कठिन और कभी–कभी खतरनाक भी साबित होते हैं। पुल सांगा किस्म के होते हैं और चूंकि इन पर सामान लदे पशु गुजरते हैं इसलिए सामान्यतः अन्यत्र बनने वाले पुलों की तुलना में इन्हें अधिक सावधानी और बेहतर सामग्री से तैयार किया जाता है। (एटकिंसन, ई0 टी0, 2003: 98)

वर्ष के शुरू के महीनों में तो नदियों पर हिमस्खलन से बर्फ के प्राकृतिक पुल बन जाते हैं क्योंकि विशेष रूप से दर्रों के ऊपरी इलाकों में लम्बी दूरी तक नदियां बर्फ से इस कदर ढकी होती हैं कि उनमें पानी दिखाई ही नहीं देता। यहाँ इतनी बार भू–स्खलन (पेरा) होते हैं कि भोटिया लोगों को इन्हें साफ करने के लिए लगातार मेहनत करनी पड़ती है। इस तरह के स्खलनों से कई बार नदी का प्रवाह अवरूद्ध हो जाता है और लगातार दो–तीन दिन तक पानी एक स्थान पर जमा होने लगता है। पानी के वजन से जब यह अवरोध फूटता है तो नदी अपने प्रवाह–क्षेत्र के आस–पास के रास्ते का भी नामोनिशान मिटा ले जाती है और एक इंच भी जमीन रास्ते के लिए नहीं छोड़ती। ऐसी अवस्था में नया रास्ता वहाँ से हट कर बनाया जाता है। दर्रों के बारे में यह कहा जा सकता है कि उनसे आना–जाना सम्भव है लेकिन भोटिया लोग जहाँ सामान के साथ बिना किसी कठिनाई के इन्हें पार कर लेते हैं वहीं पहाड़ के अन्य इलाकों के लोगों को खाली हाथ भी सावधानी के साथ चलना पड़ता है और सभी तरह के पशुओं को मानवीय सहायता की आवश्यकता होती है। (एटकिंसन, ई0 टी0, 2003: 99)

'एटकिंसन' गढ़वाल के सड़क–सम्पर्क पर टिप्पणी करते हुए लिखते हैं कि जिले में खूब सड़कें हैं जो दस से बारह फीट चौड़ी हैं। लगभग सभी में पुल हैं और अब नई सड़कें बनाने के बजाय वर्तमान सड़कों को सुधारने पर ध्यान दिया जा रहा है। जिले में एक हजार मील लम्बी सड़क का रख–रखाव सरकारी अनुदान और वहाँ के लोगों के श्रम से होता है जहाँ से ये सड़कें गुजरती हैं। (एटकिंसन, ई0 टी0, 2003: 229) सरकार से एक समझौते के मुताबिक भू–राजस्व में से इनके रख–रखाव के लिए मद अलग रखी जाती है। यह पाया गया कि इन सड़कों की मरम्मत में रुपयों की तुलना में श्रम का काम ज्यादा है और यह सभी वर्ग के ग्रामीण भली–भाँति लगा सकते हैं। कुमाऊँ की तरह गढ़वाल में भी मरम्मत–कार्यों का पदेन देख–रेख कर्ता (सुपरिटेंडेंट) पटवारी है और वह उन कार्यों की भी निगरानी करता है जो ग्रामीणों को करने होते हैं। पुल निर्माण व खर्चीले काम इसके लिए नियत सरकारी प्रतिष्ठानों द्वारा कराए जाते हैं। पहाड़ी सड़कें तारकोल बिछी नहीं हैं और ये दो तिहाई ऊपरी पहाड़ी की तरफ से काट कर व बाहरी ओर चिन कर और ऊपर की मिट्टी भर कर बनाई जाती हैं। जब सम्भव होता है सड़क की पूरी चौड़ाई काट कर बनाई जाती है लेकिन कई स्थानों पर जब खड़ा चट्टानी पहाड़ रास्ते में पड़ता है तो पूरा रास्ता चिनाई कर बनाना पड़ता है। इस तरह की पुश्ता–दीवार में चूना बहुत कम इस्तेमाल होता है क्योंकि यहाँ पत्थर अच्छा है और पहाड़ी लोग चिनाई के भी उस्ताद हैं। आठ से दस फीट चौड़ी सड़क के निर्माण पर सामान्यतः 250 से 400 रुपए तक की प्रति मील लागत आती है। जहाँ चट्टान की ज्यादा कटाई करनी होती है वहाँ 800 रुपया प्रति मील तक लागत पड़ जाती है। इस औसत लागत में छोटी–छोटी पुलिया (कलवर्ट) भी शामिल हैं जिन्हें स्लेट–पत्थरों या लकड़ी की बल्लियों को आर–पार रख कर बनाया जाता है। (एटकिंसन, ई0 टी0, 2003: 230)

एक अन्य स्थान पर 'ट्रेल' की टिप्पणी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है कि 'पहाड़ी नदियों का उत्कट वेग खास तौर पर बरसात में सम्पर्क व संचार के रास्ते में बड़ी रुकावट है। पुलों के अभाव में व्यापारी, उनका सामान व पशु घाट पर रहने वाले लोगों की सहायता से नदी पार करते हैं जो सुखाए गए तूंबों की मदद से तैरते हैं। 'एटकिंसन' ने लिखा है कि पुल चार प्रकार के हैं। पहली तरह का पुल डंडे को एक किनारे से दूसरे किनारे अड़ा कर बनाया जाता है। दूसरी तरह के पुल में लकड़ी की एक के ऊपर दूसरी तह होती है तथा दोनों किनारों से हर ऊपर की लकड़ी अपने नीचे की बल्ली से आगे निकली होती है। इस तरह हर ऊपर की बल्ली दूसरे किनारे को बढ़ी होती है। ये बल्लियां तब तक एक के ऊपर एक रखी जाती हैं जब तक दोनों तरफ की बल्लियां एक दूसरे के इतने करीब न पहुंच जाएं कि ऊपरी तह पर एक ही बल्ली रख दी जाय। आगे आई लकड़ी के पिछले हिस्से को पत्थरों की पील–पाई से कसा जाता है। इसे सांगा पुल कहते हैं और इन पुलों की लम्बाई सामान्यतः दो से तीन बल्लियों के बराबर होती है। कई बार इसके दोनों ओर रेलिंग भी बनाई जाती है। तीसरी तरह के पुल को झूला पुल कहते है। इसमें दो जोड़े रस्सों पर तीन फीट लम्बी डोरियों के सहारे दो फीट चौड़ी, हल्की सीढ़ी बिछा दी जाती है। इस तरह ऊपर की रस्सियां जंगले का काम करती हैं और बिछी सीढ़ी की खपच्चियों में पांव रख कर आगे बढ़ते हैं। झूला पुल को भेड़–बकरियों के जाने लायक बनाने के लिए इन खपच्चियों को एक दूसरे के इतने पास बुन दिया जाता है कि वे इन पर चल सकें। इस तरह के पुल के निर्माण के लिए दोनों तट ऊँचे होने चाहिए और जहाँ यह सुविधा नहीं होती वहाँ दोनों किनारों पर लकड़ी के स्तम्भ गाड़ कर रस्से उनके ऊपर से गुजारे जाते हैं। चौथे किस्म के पुल में नदी के आर–पार एक ही रस्सा डाला जाता है और इस पर एक

लकड़ी की चकरी के सहारे एक टोकरी लटका दी जाती है। यात्री या सामान को इस टोकरी में रख दिया जाता है और दूसरे किनारे से एक व्यक्ति टोकरी से जुड़ी रस्सी को खींचता है। इसे छिनका (क्षणिका) कहते हैं। बाद के दो किस्म के पुल बहुत सस्ते में बन जाते है क्योंकि इनके रस्से फिसलन वाली घास 'बाबड़' के बनते हैं जो इस क्षेत्र में बहुतायत में होती है। 'टर्नर' ने तिब्बत में लोहे की जंजीर के जिन पुलों का जिक्र किया है, ऐसा लगता है कि वे पुराने समय में इस्तेमाल होते थें और अब उनके कोई चिह्न नहीं मिलते। ब्रिटिश हुकूमत के अधीन कई सांगा पुल बनाए गए हैं और चूँकि लकड़ी के जल्दी खराब हो जाने के कारण हर तीन–चार साल बाद से बदलने पड़ते हैं इसलिए यह पाया गया है कि अब लोहे की जंजीर वाले पुल बनाए जाने चाहिए। (एटकिंसन, ई0 टी0, 2003: 230–31) 'राहुल सांकृत्यायन' ने भी अपनी पुस्तक 'हिमालय परिचय' में कुल चार प्रकार के पुलों का वर्णन दिया है। (सांकृत्यायन, राहुल, 1953: 316)

गढ़वाल की प्रमुख सड़कों और कुछ मार्गों पर यात्रा के लिए प्रक्रिया यह है कि पौड़ी में कुलियों की मांग भेजी जाती है और यह बताया जाता है कि कितने कुली चाहिए। एक चपरासी पहले भेज कर पटवारी से कुली प्राप्त किये जाते हैं जो अगले पड़ाव तक साथ चलें और विश्राम–स्थल तक सामान पहुँचाएं। फिर दूसरे पटवारी से उसके क्षेत्र की यात्रा के लिए नये कुली लिये जाते हैं। (एटकिंसन, ई0 टी0, 2003: 231)

'ई0 टी0 एटकिंसन' ने अपनी पुस्तक 'हिमालयन गजेटियर' में गढ़वाल के परम्परागत यात्रा–मार्ग का वर्णन निम्नलिखित दिया है –(एटकिंसन, ई0 टी0, 2003: 231–34)

कहाँ से	कहाँ तक	लम्बाई (मील में)	पड़ावों की संख्या	टिप्पणी
चटवापीपल	भीरी	21	2	अच्छी सड़क, आंशिक पुलशुदा
ग्वालदम	नन्दप्रयाग	42	$3^{1/2}$	सड़क अच्छी है, पूरी पुलशुदा है। कत्यूर के बाद बैजनाथ पड़ाव है, वहाँ से झूलाबगड़ के लिए 12 मील पर ग्वालदम, वहाँ से 12 मील पर दूनागिरि, 12 मील आगे घाट और 12 मील आगे नन्दप्रयाग है।
ग्वालदम (पिंडर घाटी होते हुए)	कर्णप्रयाग	35	3	अच्छी सड़क, पिंडर को दो बार पार करती है, एक पुल की आवश्यकता है। पूरी सड़क पुलशुदा।
लोहबा	बूंगीधार	13	1	खच्चर मार्ग, कम इस्तेमाल होता है, यह दूधातोली श्रृंखला को 10,000 फीट की ऊंचाई पर पार करता है।
लोहबा	कैनूर	22	2	खच्चर मार्ग जिस पर पुल बनाया जा रहा है। इस मार्ग को बरसात में घोड़े पार नहीं कर पाते हैं।
पोखरी	चमोली	15	1	————————
रामणी	ग्वालदम	35	3	अच्छी सड़क, पूरी पुलशुदा। पाटलीदून तक पुलशुदा, वहाँ से यह जंगल की सीमा में प्रविष्ट हो जाती है।

पौड़ी	देवप्रयाग	15	1	पाटलीदून तक पुलशुदा है, वहाँ से सड़क
कैनूर	रामनगर	45	4	जंगल की सीमा में प्रविष्ट हो जाती है।
	(मर्चुला पुल तक)			पूरी सड़क पुलशुदा।
				अच्छी सड़क, जंगल की सीमा तक पुलशुदा।
कैनूर	धारों (भाबर में)	62	6	अच्छी सड़क, पूरी पुलशुदा।
				ठीक, आंशिक पुलशुदा।
				पूरी पुलशुदा, झोली और कुंझोली में बंगला।
पौड़ी	धारों	$67^{3/4}$	6	
				ऊंची पहाड़ी धार के किनारे अच्छी सड़क।
				खच्चर मार्ग।
चाँदपुर	कोटद्वार	$84^{1/2}$	7	
उखलेत	कालूशहीद	$42^{3/4}$	4	
उलखेत	डोमैला	$28^{1/2}$	3	
द्वारीखाल या लंगूर	गोरीघाट	$47^{1/4}$	4	
पौड़ी	अगासपुर	$51^{1/4}$	4	
	(और आगे अल्मोड़ा)			
पौड़ी	चटवापीपल	49	4	
पौड़ी	ब्यासघाट	27	2	

श्रीनगर और पौड़ी से रास्ते (डाक–लाइन और यात्रा–मार्ग के पड़ाव दर्शाते हुए)

पड़ाव	दूरी (मील में)	टिप्पणी
क – श्रीनगर से हरिद्वार जहाँ तक गढ़वाल की सीमा है।		
सीता कोटी	11	कोई बनिया नहीं।
ब्यासघाट	14	रास्ते में देवप्रयाग में बनिये की दुकान।
चाँदपुर का मांडा	$10^{1/2}$	कोई बनिया नहीं।
बैरागणा	12	कोई बनिया नहीं।
लक्ष्मण झूला	9	कोई बनिया नहीं, सड़क अलकनन्दा और गंगा के बाएं किनारे–किनारे गुजरती है।
ख – श्रीनगर से केदारनाथ यात्रा–मार्ग		
सिरोड़बगड़	12	बनिया की दुकान।
पुनाड़ (रुद्रप्रयाग)	7	बनिया की दुकान।
अगस्त्यमुनि	12	बनिया की दुकान।
गुप्तकाशी	14	बनिया की दुकान।
फाटा	8	कोई बनिया नहीं।
झिलमिलपटन	10	कोई बनिया नहीं।
केदारनाथ	10	कोई बनिया नहीं, अंतिम सिरे को छोड़ यह ठीक सड़क है।
ग– गुप्तकाशी से चमोली		

ग्वालिया बगड़	9	कोई बनिया नहीं।
चोब्टा (यहाँ से तुंगनाथ जाते हैं)	11	केवल मई से अक्टूबर तक बनिया की दुकान रहती है।
मंडल	12	बनिया की दुकान रहती है।
चमोली (गोपेश्वर)	11	बनिया की दुकान है, मार्ग अच्छा और उसका रख–रखाव भी अच्छा है।
घ – श्रीनगर से नीती		
सिरोड़बगड़	12	बनिया की दुकान।
पुनाड़	7	बनिया की दुकान।
चटवापीपल	15	बनिया की दुकान।
नन्दप्रयाग	$12^{1/2}$	बनिया की दुकान।
चमोली	7	बनिया की दुकान।
पीपलकोटी	8	बनिया की दुकान।
हेलंग	11	बनिया की दुकान।
जोशीमठ	7	बनिया और बंगला। यहाँ से बदरीनाथ होते हुए माणा के लिए चार पड़ाव हैं। यहाँ से पाण्डुकेश्वर 9 मील, बदरीनाथ और आगे 9 मील तथा माणा दो मील और आगे है।
तपोवन	7	कोई बनिया नहीं।
सुरांई ठोटा	10	कोई बनिया नहीं।
झेलम	9	कोई बनिया नहीं।
मलारी	8	कोई बनिया नहीं।
गमसाली	9	कोई बनिया नहीं।
नीती	4	कोई बनिया नहीं।
यहाँ लम्बी और खड़ी चढ़ाई नहीं है और लगभग पूरे रास्ते घोड़ा आराम से ले जाता है। जोशीमठ के ऊपर गाँव बहुत दूर–दूर बसे हैं, इसलिए कभी–कभार आने वाले यात्री को अपने साथ खाने–पीने का सामान भी लेकर चलना चाहिए।		

च– श्रीनगर से कोटद्वार		
पौड़ी	$7^{1/2}$	बनिया की दुकान।
नैथाणा	15	बनिया और बंगला।
ठिंगाबांज	9	बनिया की दुकान।
डाडामंडी	$7^{1/2}$	दुकान और बंगला। पड़ाव 3 और 4 एक साथ तय किये जा सकते है।
कोटद्वार	13	बाजार और बंगला।
छ– गणाई से जोशीमठ		
लोहबा	15	बंगला और बनिया।
आदिबदरी	12	बनिया की दुकान।
कर्णप्रयाग	10	बनिया की दुकान।
1. नन्दप्रयाग या लोहबा	9	बनिया की दुकान। यहाँ से गंगाघाटी में मार्ग 'घ' वाला रास्ता है।
2. नारायणबगड़	15	
3. बांजबगड़	12	
4. नन्दप्रयाग या बांजबगड़ से	13	दुकान और छोटा मकान।
5. रामणी	14	दुकान।
6. कलियाघाट या पाणा	14	दुकान, यहाँ से मार्ग 'घ' वाला रास्ता।
7. खुलाड़ा	15	
8. जोशीमठ	10	दुकान।
9. तपोवन	8	कोई दुकान नहीं इसके लिए 15,000 फीट ऊँचाई पर कुंवाली दर्रा पार करना होता है। बंगला और दुकान।

		कोई दुकान नहीं, यहाँ से मार्ग 'घ' देखें।
ज– अल्मोड़ा से मसूरी		
भैंसखेत	$13^{1/2}$	बंगला है।
द्वाराहाट	$12^{1/2}$	बंगला है।
गणाई	9	बंगला है।
देघाट	15	कोई बंगला नहीं।
बूंगीधार	8	बंगला है।
कैनूर	$12^{1/2}$	बंगला है।
चिपलघाट	16	बंगला है।
पौड़ी	$13^{1/2}$	कोई बंगला नहीं।
श्रीनगर	$7^{1/2}$	बंगला है।
ताकुली	13	कोई बंगला नहीं।
पाण	$9^{1/2}$	छोटा सा मकान
टिहरी	$11^{1/2}$	बंगला है।
कौड़िया गला	12	कोई बंगला नहीं।
धनोल्टी	13	कोई बंगला नहीं।
मसूरी	16	कोई बंगला नहीं।
इस मार्ग पर पड़ने वाले बंगले सुसज्जित हैं लेकिन चौकीदार के अलावा कोई नौकर नहीं है। ब्रिटिश क्षेत्र तक यानी श्रीनगर तक हर पड़ाव–स्थल पर दुकान उपलब्ध है। टिहरी रियासत में सामान–आपूर्ति के लिए राजा के एजेंट को पहले सूचित करना पड़ता है। प्रायः धनोल्टी से मसूरी के लिए बीच में एक और पड़ाव किया जाता है।		

सन् 1816 ई0 में मिस्टर 'ट्रेल' ने सड़कों को बेहतर बनाने और उनके रख–रखाव के सम्बन्ध में सरकार से सिफारिश की। इसके अन्तर्गत केदारनाथ और बदरीनाथ की आय जिन मदों से होती थी। उनमें 4 प्रमुख मदें थीं– (अ) सदावर्त कोष से राजस्व (ब) मंदिर में यात्रियों की भेंट (स) गूंठ–जमीन से मुद्रा और वस्तु के रूप में लगान (द) मंदिर के आस–पास जमीन के मालिक की मृत्यु पर लावारिस संपत्ति। सरकार के अधिकारियों ने आय के अंतिम तीन संसाधनों में कभी दखल नहीं दिया। 'ट्रेल' ने सदावर्त प्रशासन को मंदिर के कोष से पूरी तरह अलग रखा और शीघ्र ही पाया कि बदरीनाथ के लिए निर्धारित राजस्व पीपलकोटी व जोशीमठ में होने वाले खर्चे से काफी बढ़ गया है अतः सिफारिश के आधार पर केदारनाथ और बदरीनाथ मंदिरों को होने वाली अतिरिक्त आय में से इन मंदिरों को जाने वाली सड़कों को बेहतर बनाने और उनके रख–रखाव पर खर्च किया जाय क्योंकि खराब सड़कों के कारण यात्रियों को जान–माल का बहुत नुकसान होता था। तद्नुसार कुछ वर्षों तक कोष को जमा करते रहने के बाद सन् 1827–28 ई0 में 'ट्रेल' ने भूमिधारकों के जरिए हरिद्वार से बदरीनाथ तक सड़क बनाने का काम हाथ में लिया और आधे से ज्यादा सड़क अपनी देख–रेख में बनवाई। इस काम के लिए 'ट्रेल' ने वह खतरे भी उठाए जो बहुत कम लोग उठा सकते हैं। यह काम सात वर्षों में पूरा कर लिया गया। बाद के तीन वर्षों में यानि 1835 ई0 तक रुद्रप्रयाग से केदारनाथ, ऊखीमठ से चमोली और कर्णप्रयाग से लोहबा होते हुए रुहेलखण्ड तक सड़क बना दी गई थीं। ये सड़कें करीब 300 मील लम्बी हैं जिनका निर्माण 25,000 रुपए में कराया गया। सन् 1840 ई0 में दान से 2,685 रुपए की आमदनी हुई और यात्रियों के भोजन आदि पर 1,197 रुपए खर्च हुआ। कुल 1,488 रुपए सड़क–कोष के लिए बच गए। (एटकिंसन, ई0 टी0, 2003: 287)

पहले से जमा हुई बचत 4,600 रुपए से सड़कों को चौड़ा करने की सोची गई। मिस्टर 'ट्रेल' की मानव–कल्याण कार्यों और यात्री–सड़क निर्माण के लिए जितनी तारीफ की जाय, कम है। लेकिन यह आश्चर्य की बात है कि जिन स्थानों पर सड़क की सबसे ज्यादा जरूरत थी वहाँ उन्होंने ध्यान नहीं दिया। जोशीमठ और नीती दर्रे के बीच सड़क की जरूरत को अनदेखा किया गया, इसके अलावा अल्मोड़ा और गढ़वाल के बीच तथा श्रीनगर और नजीबाबाद के बीच तथा कई महत्त्वपूर्ण हिस्सों में सड़क की जरूरत थी। 'ट्रेल' के उत्तराधिकारियों ने बाद में उसकी चूक को सुधारा और इसके लिए बेगार प्रणाली भी अपनाई। 'ट्रेल' शायद इस प्रणाली के खिलाफ थे, लेकिन क्यों थे ? इसका कोई कारण नहीं है। सन् 1830 ई0 में ही हरिद्वार से देवप्रयाग तक सड़क बन कर तैयार हुई और सन् 1840 ई0 में नीती दर्रे के लिए सड़क शुरू हुई, इसी के साथ अन्य सड़कों का काम भी चलता रहा। (एटकिंसन, ई0 टी0, 2003: 287–88) 'एटकिंसन' स्वयं एक स्थान पर लिखते हैं कि 'मैं अतिशयोक्ति नहीं कर रहा हूँ कि अंग्रेजी शासन के शुरू से अब तक इस क्षेत्र के विकास के लिए जितना कुछ किया गया उस सब को मिला कर भी उतना लाभकारी काम नहीं हुआ जितना 'ट्रेल' और उसके अनुवर्तियों ने सड़क–निर्माण कर गढ़वाल के लिए किया। मैं यह भी कहना चाहूँगा कि सदावर्त–कोष की बचत से उसने वह काम किया जिसके लिए इस पहाड़ी क्षेत्र में उसका नाम प्रशंसा और सम्मान के साथ लिया जाता है।' सरकार को अपनी रिपोर्ट में इस अधिकारी ने प्रस्ताव किया था कि सदावर्त–कोष फिर से सरकार की देख–रेख में रखा जाना चाहिए। इसी परिप्रेक्ष्य में सरकार ने 'ट्रेल' को आदेश दिया कि स्थानीय एजेंसी अधिनियम (1810 के विनियम XIX) की भावना के अनुरूप वह न्यास के रूप में इनका प्रबन्ध करें। शुद्ध आय के वितरण के अन्तर्गत ही जिन मंदिरों में सबसे ज्यादा यात्री आते हैं उनको जाने वाली सड़कों की मरम्मत को दे। (एटकिंसन, ई0 टी0, 2003: 290)

देहरा को मैदानों से जोड़ने वाले दो प्रमुख व्यापारिक मार्ग हैं – रूड़की–देहरा–राजपुर–लंढौर सड़क और सहारनपुर–चकराता सड़क। इनमें से पहली सड़क 'मिस्टर शोरी' ने करीब 1823 ई0 में सिद्धदोष अपराधियों के श्रम से बनवाई।

(वाल्टन, एच0 जी0, 2006: 84) 1823 ई0 में 'एफ0 जे0 शोरी' ने संयुक्त मजिस्ट्रेट के रूप में जब कार्यभार ग्रहण किया तो देहरा में उसके आवास की अवधि अर्थात् 1828 ई0 तक कई सुधारात्मक कार्य इस कस्बे सहित पूरे जिले में हुई, 'मिस्टर शोरी' की उत्साह और प्रतिबद्धता लोगों में भी फैल गई। उसने लोगों को सड़कों की मरम्मत के लिए प्रेरित किया। (वाल्टन, एच0 जी0, 2006: 237–38) कालान्तर में चकराता में छावनी बनने के फलस्वरूप सहारनपुर–चकराता सैनिक सड़क अस्तित्व में आई। यह सन् 1873 ई0 में बनाई गई। यह सड़क देहरादून जिले में तिमली दर्रे से होकर पहुँचती है। सैनिक सड़क का निर्माण मिस्टर 'एच0 जी0 रौस' के तीव्र विरोध के बावजूद काफी धन खर्च कर किया गया। तत्कालीन अधीक्षक 'मिस्टर रौस' ने उचित राय ही व्यक्त की थी कि जितने पैसे में यह सड़क बनाई जाएगी उतने में देहरा तक रेल लाइन और देहरा से चकराता तक पक्की तारकोल वाली सड़क बन सकती है। तब उसकी सलाह को स्वीकार नहीं किया गया लेकिन बाद में परिणामों ने उसकी बात सच सिद्ध कर दी। (वाल्टन, एच0 जी0, 2006: 85) देहरा–हरिद्वार सड़क मैदानों और दून के बीच एक अन्य सम्पर्क मार्ग है, जबकि तत्कालीन समय में ऋषिकेश–हरिद्वार मार्ग भी प्रचलन में आ चुकी थी। (वाल्टन, एच0 जी0, 2006: 85–87) औपनिवेशिक शासन में सड़कों की हालत देखकर 1852 ई0 में 'कलकत्ता रिव्यू' ने लिखा कि – 'हमारा शायद सबसे बड़ा दोष यह रहा है कि हमने देश के भिन्न–भिन्न भागों के भीतर यातायात की सुविधा के लिए बहुत कम काम किया है। यातायात के साधनों की कमी किसी देश के सुधार के लिए बहुत खतरे की चीज़ है, और गढ़वाल जैसे देश के लिए तो और भी ज्यादा, जो कि विशाल पहाड़ों से ढँका है और जिन्हें दुर्गम पहाड़ी धारायें काटती हुई चलती हैं।' (सांकृत्यायन, राहुल, 1953: 316)

इसी प्रकार 'यशवन्तसिंह कठोच' अपनी पुस्तक 'उत्तराखण्ड का नवीन इतिहास' में गढ़वाल के परम्परागत तीर्थयात्रा–मार्ग का वर्णन देते है जिसके अनुसार निम्नलिखित मार्ग प्रचलित थे– (कठोच, यशवन्त सिंह, 2006: 48–51)

1 –गंगाद्वार (हरिद्वार) से बदरीनाथ मार्ग (183 मील)

गंगाद्वार से ऋषिकेश 14, नाईमोहन 12, बन्दरचट्टी होकर महादेवचट्टी $12^{1/4}$, व्यासघाट $10^{3/4}$, बाह या देवप्रयाग 8, राणीबाग $8^{1/2}$, श्रीनगर 10, भट्टीसेरा 8, पुनाड़ (रूद्रप्रयाग) 11, शिवानन्दी 8, गौचर, चटवापीपल होकर कर्णप्रयाग $10^{1/2}$, सोनला होकर नन्दप्रयाग 13, लालसाँगा (चमोली) 6, मठ, हाट होकर पीपलकोटी 10, गरूड़गंगा, टंगणी होकर गुलाबकोटी 12, हेलंगचट्टी, खनोटी होकर जोशीमठ 11, घाट चट्टी होकर पाण्डुकेश्वर 8, लामबगड़, हनुमानचट्टी होकर बदरीनाथ 11 मील। बदरीनाथ से मणिभद्रपुर, बसुधारा होकर सतोपन्थ 16 मील। चमोली से जोशीमठ होकर बदरीनाथ 52 मील। श्रीनगर से बदरीनाथ 108 मील। जोशीमठ से तपोवन 8, सुबैगाँव में भविष्यबदरी 3 मील।

2 –गंगाद्वार से केदारनाथ मार्ग ($150^{1/2}$ मील)

गंगाद्वार से रूद्रप्रयाग 94 मील। रूद्रप्रयाग से तिलबाड़ा, मठ होकर अगस्त्यमुनि 11, भीरी तथा कुण्ड होकर गुप्तकाशी $13^{1/2}$, नाला तथा भेता होकर फाटा 9, त्रियुगीनारायण तथा सोनद्वारा (सौनकप्रयाग) होकर गौरीकुण्ड $13^{1/4}$, चीरबासा, रामबाड़ा चट्टी होकर केदारनाथ 10 मील।

3 –केदारनाथ से लालसाँगा (चमोली) मार्ग (64 मील)

केदारनाथ से गौरीकुण्ड 10, फाटा $13^{1/4}$, नाला होकर उखीमठ $11^{3/4}$, पोथाबासा होकर चोपता $12^{1/2}$, मण्डलचट्टी $8^{1/2}$, जंगलचट्टी, वैरागणा, गोपेश्वर होकर लालसाँगा (चमोली) 9 मील। टिप्पणी : नाला से पथ ऊषीमठ को। चोपता से तीन मील चढ़ाई पर तुंगनाथ (12,071 फुट)। केदारनाथ से ऊखीमठ 34 मील से कुछ अधिक। ऊषीमठ से चमोली 30 मील। मण्डल से अनसूया मं0 होकर रूद्रनाथ 15 मील।

4 –देवप्रयाग से यमुनोत्तरी मार्ग

देवप्रयाग से हिंडोलाखाल, जाखणी होकर पुरानी टिहरी 30, टिहरी से यमुनोत्तरी 76 तथा धरासू से यमुनोत्तरी 50 मील। टिहरी से भल्ड्याणा, धरासू, गेंवला, डंडालगाँव, गंगाणी, कुथनौर, रानागाँव, खरसाली, यमुनोत्तरी।

5 –देवप्रयाग से गंगोत्तरी मार्ग (130 मील)

गंगाद्वार से देवप्रयाग 57 मील। देवप्रयाग से रौड़ 11, जेलम 10, पुरानी टिहरी 11, भल्ड्याणा $11^{1/4}$, छाम तथा नगूणगाड़ होकर धरासू 14, डुण्डा 8, बाड़ाहाट (उत्तरकाशी) 9, मनेरी 9, भटवाड़ी 9, गंगनाणी 9, सूकी 8, हर्षिल 5, धराली होकर जांगला 8, गंगोत्तरी 8 मील। गंगोत्तरी से गोमुख 18 मील।

6 –गंगोत्तरी से केदारनाथ मार्ग (109 मील)

गंगोत्तरी से पाँच पड़ाव लौटकर भटवाड़ी 38, चौरना 9, पंगराणा 9, बूढ़ाकेदार (थाती) 12, जंगलचट्टी (हटकुणी) 5, घुत्तू 10, चढ़ाई से पँवाली 10, मधू–की–माण्डा होकर त्रियुगीनारायण 13, सोनद्वारा 3, केदारनाथ 13 मील। भटवाड़ी से त्रियुगीनारायण 54 मील तथा सोनद्वारा 71 मील।

7 –चमोली से लोकपाल मार्ग ($46^{1/2}$ मील)

चमोली से जोशीमठ 33, घाट चट्टी, पुल पारकर पुनगाँव, भ्युँढार (नन्दनवन), घाँघरिया, नाराथोर गुफा, लोकपाल (हेमकुण्ड)। यहाँ से आगे काकभुशुण्डि तीर्थ।

8 –देवप्रयाग से केदारनाथ मार्ग

देवप्रयाग से पुरानी टिहरी 30, क्रमशः घोंटी, घणसाली, थाती साँकरी, घुतु, पँवाली, मधु–की–माण्डा, त्रियुगीनारायण, केदारनाथ। पुरानी टिहरी से त्रियुगीनारायण 56 मील।

9 –ऊखीमठ/नाला से मध्यमेश्वर

1. ऊषीमठ से मनसूना 7, राँसी 7, गौंदार 7, मध्यमेश्वर 7 (प्रायः 29 मील)।

2. नाला चट्टी से कालीमठ होकर राँसी, गौंदार, मध्यमेश्वर।

10 – गणाई से जोशीमठ–तपोवन मार्ग

1. लोहबा 15, आदिबदरी 12, कर्णप्रयाग 10, नन्दप्रयाग 9 मील।
2. लोहबा 15, नारायणबगड़ 12, बाँजबगड़ 13, नन्दप्रयाग 14, चमोली 7, पीपलकोटी 8, हेलंग 11, जोशीमठ 7, तपोवन 7।
3. बाँजबगड़ से रामणी 14, कलियाघाट (पाणा) 14, कुँवाली घाट पारकर खुलाणा 15, जोशीमठ 10, तपोवन 8।

11 –बैजनाथ से नन्दप्रयाग मार्ग

बैजनाथ से लोहबा, इनोड़ाखाल दर्रा, कण्डौली, बूँग, नारायणबगड़, नन्दप्रयाग।
बागेश्वर से असकोट मार्ग (थल, डीडीहाट होकर)।

12 – अल्मोड़ा से श्रीनगर मार्ग

1. अल्मोड़ा से हवालबाग, द्वाराहाट, महरगाँव, चौखटिया (गणाई), मेहलचौरी, गैरसैंण, चाँदपुरगढ़, भैंसवाड़, खिर्सू, देवलगढ़, श्रीनगर।
2. अल्मोड़ा से बागेश्वर, बैजनाथ, ग्वालदम, थराली, नारायणबगड़, सिमली, कर्णप्रयाग, रूद्रप्रयाग, श्रीनगर।
3. अल्मोड़ा से भैंसखेत $13^{1/2}$, द्वाराहाट $12^{1/2}$, गणाई 9, देघाट 15, बूँगीधार 8, कैनूर $12^{1/2}$, ग्वालकुड़ा–चिपलघाट 16, पौड़ी $13^{1/2}$, श्रीनगर $7^{1/2}$ मील।

13 – खोहद्वार (पुराना कोटद्वार) से श्रीनगर मार्ग (58 मील)

1. कोटद्वार से दुगड्डा होकर डाडामण्डी 15, बाँगघाट 13, अदवाणी 12, पौड़ी 10, श्रीनगर $7^{1/2}$ मील।
2. कोटद्वार से डाडामण्डी 13, ठिंगा बाँज $7^{1/2}$, नैथाणा 9, पौड़ी 15, श्रीनगर $7^{1/2}$ मील।

14 – श्रीबदरीनाथ से कोटद्वार प्रत्यावर्तन मार्ग (166 मील)

बदरीनाथ से श्रीनगर 108, पौड़ी 8, अदवाणी 10, बाँगघाट 13, द्वारीखाल होकर डाडामण्डी 13, दुगड्डा होकर कोटद्वार 15 मील।

15 – श्रीबदरीनाथ से रामनगर प्रत्यावर्तन मार्ग (164 मील)

बदरीनाथ से कर्णप्रयाग 71, कर्णप्रयाग से रामनगर 93 मील। कर्णप्रयाग से सिमली होकर आदिबदरी 12, जंगलचट्टी, गैरसैंण होकर धुनारघाट 12, मेहलचौंरी होकर गणाई 13, मासी होकर थापला 9, बसैड़ी, नाला, जयनौला होकर भिकियासैंण 9, गुजरघाटी 11, मोहान 14, ढिकुली होकर रामनगर 14 मील। (कर्णप्रयाग से मेहलचौंरी 29, मेहलचौंरी से भिकियासैंण 26 तथा भिकियासैंण से रामनगर 38 मील)।

16 – कर्णप्रयाग से काठगोदाम प्रत्यावर्तन मार्ग ($95^{1/2}$ मील)

कर्णप्रयाग से सिमली होकर आदिबदरी $11^{1/2}$, धुनारघाट 11, मेहलचौंरी 4, गणाई 6, द्वाराहाट 15, ग्वालीपोखर होकर बासुलीसेरा 6, मँजखाली चट्टी होकर राणीखेत $10^{1/2}$, खैरना 13, गर्मपाणी चट्टी होकर भीमताल 13, रानीचट्टी होकर काठगोदाम 6 मील।

17 –डण्डालगाँव से जुब्बल–विशहर मार्ग

डण्डालगाँव से बड़कोट गाँव 1, यमुना–पारकर मँज्याली 6, पुरोला 4, पर्वतपृष्ठ पर रिंगाली 6, उतरकर टोन्स–तटस्थ ठडियार 6, अनोली 1, टोन्स–पावर–संगम पर त्यूणी 6। यहाँ से एक मार्ग शिमला को, दूसरा राईगढ़, हाटकोटी को।

18 – भैरोंघाटी से तिब्बत मार्ग (जाडगंगा के दायीं ओर से)

जांगला से गडताङ् 6, कंछ्र्या पुल प्रायः 6, लम्बा थाच (त) लग0 6, नेलंग से तिब्बत।

टिहरी रियासत के शासकों ने भी यात्रा–पथ के निर्माण में रूचि दिखाई। सुदर्शनशाह के शासनकाल में टिहरी से देवप्रयाग, तपोवन–ऋषिकेश, बाड़ाहाट (उत्तरकाशी), गंगोत्तरी–बड़कोट–यमुनोत्तरी आदि स्थानों को जाने के लिए पगडंडीनुमा सड़कें थीं। सन् 1820 ई0 में प्रसिद्ध पर्यटक 'विलियम मूरक्राफ्ट' जब टिहरी पहुँचा तो वहाँ जाने के लिए उसे ऊबड़–खाबड़ रास्तों से गुजरना पड़ा। अपने यात्रा वर्णन में उसने टिहरी से नेलंग होकर हूण देश (तिब्बत) के लिए खच्चरों, घोड़ों व याकों के चलने लायक रास्ता बताया। सन् 1857 में महाराजा सुदर्शनशाह ने ब्रिटिश सरकार को अपने राज्य में सड़कें बनाने की औपचारिक स्वीकृति प्रदान की। (नवानी/रावत, 2011: 556) महाराजा प्रतापशाह ने टिहरी–मसूरी तथा टिहरी–श्रीनगर के दो राजमार्गों का निर्माण करवाया तथा राज्य में हरिद्वार–गंगोत्तरी आदि अनेक मार्गों की मरम्मत करवाई। (कठोच, यशवन्त सिंह, 2006: 198) इसी तरह महाराजा कीर्तिशाह ने यमुना पर 'हिबेट ब्रिज' का निमार्ण कराया। (कठोच, यशवन्त सिंह, 2006: 201) इसी के साथ सड़कों एवं पगडंडियों को बेहतर बनाने और रख–रखाव को नियमित करने के उद्देश्य से 'सार्वजनिक निर्माण विभाग' का गठन किया तथा पुलों की मरम्मत करवायी। अपने शासनकाल के दौरान कीर्तिशाह ने लगभग 263 मील लम्बी सड़कों का निर्माण कराया। (नवानी/रावत, 2011: 556) महाराजा नरेन्द्रशाह ने भी अपने नाम से नरेन्द्रनगर की स्थापना की जहाँ राजभवन का निर्माण 1924 ई0 में पूर्ण हुआ। 1925 ई0 में राजधानी वहाँ स्थानान्तरित की गयी। मुनि की रेती (ऋषिकेश) से नरेन्द्रनगर, मुनि की रेती से कीर्तिनगर, नरेन्द्रनगर से टिहरी तथा कीर्तिनगर से टिहरी तक मोटर मार्गों का निर्माण राज्य व्यय पर किया गया। इससे यातायात सुगम हुआ ही साथ ही साथ व्यापार में भी वृद्धि हुई। (कठोच, यशवन्त सिंह, 2006: 204) महाराजा नरेन्द्रशाह के शासनकाल में सड़कों का बहुत विकास हुआ। सन् 1940 ई0 तक टिहरी रियासत में 116 मील मोटर सड़क (53 मील ऋषिकेश से टिहरी तथा 63 मील ऋषिकेश से कीर्तिनगर) तथा 844 मील कच्ची सड़कें थी। स्वतंत्रता के समय गढ़राज्य के अंतिम नरेश मानवेन्द्र शाह (1946–49) का समय राजनैतिक आंदोलनों एवं संघर्षों का काल रहा, पर इनके शासनकाल में टिहरी से धरासू तक मोटर मार्ग का निर्माण कार्य प्रारम्भ हो चुका था। (नवानी/रावत, 2011: 556) 1 अगस्त 1949 को तत्कालीन मुख्यमंत्री 'गोविन्दवल्लभ पन्त जी' ने असेम्बली भवन नरेन्द्रनगर में ऐतिहासिक भाषण देते हुए टिहरी शासकों के शासनकाल में हुए यात्रा–पथ और निर्माण कार्यों की

प्रशंसा की है, उनके शब्दों में 'आज हम टिहरी और नरेन्द्रनगर में इतने भवनों को बना देखते हैं, सड़कों को बना हुआ देखते हैं और दूसरी चीजों जो हम यहाँ देखते हैं, उन सबके लिए हम उनके कृतज्ञ हैं कि जिनके हाथ में पहले शासन की सत्ता थी और हमें उनके उपकार को नहीं भूलना चाहिए। (कठोच, यशवन्त सिंह, 2006: 210–11)

उत्तर औपनिवेशिक काल में यात्रा–पथ का निर्माण लोकतांत्रिक तरीके से चुनी गई सरकारों के द्वारा विभिन्न विधेयकों, नियमों–विनियमों के आधार पर किया जा रहा है, जिसमें गढ़वाल जैसे अतिसंवेदनशील, अंतर्राष्ट्रीय सीमावर्ती भू–भाग के पर्यावरणीय पहलुओं का ध्यान भी रखा जाना अत्यन्त आवश्यक है। गढ़वाल में अधिकांशतः यात्रा–पथ निर्माण कार्य राज्य इकाई के अन्तर्गत संचालित 'राज्य लोक निर्माण विभाग' के अधीन है इसके अतिरिक्त मुख्य यात्रा–पथ जिनमें राष्ट्रीय राजमार्ग सम्मिलित है, आदि का निर्माण भारत सरकार के अधीन 'सीमा सड़क संगठन' और उनकी अनुषंगी संगठन 'ग्रेफ' (सामान्य आरक्षित अभियान्त्रिक बल) के द्वारा किया जा रहा है। गढ़वाल में ग्रेफ की कई आर0 सी0 सी0 (सड़क निर्माण कम्पनी) कार्यरत् हैं जिनमें 66 आर0सी0सी0 ऋषिकेश, 75 आर0 सी0 सी0 पीपलकोटी (चमोली), 123 आर0 सी0 सी0 मलारी (जोशीमठ) एवं उत्तरकाशी में 72 आर0 सी0 सी0 एवं 144 बी0 सी0 सी0 (पुल निर्माण कम्पनी) प्रमुख हैं जो कि गढ़वाल के प्रवेशद्वार से शुरू होने वाले यात्रा–पथ के निर्माण एवं रख–रखाव का कार्य करती हैं।

पचास के दशक में गढ़वाल जैसे पर्वतीय क्षेत्र के लिए यात्रा–पथ के निर्माण में सरकारी भागीदारी जहाँ अत्यधिक मंदगति से अपना योगदान दे रही थी वहीं यहाँ के ग्रामीण समाज के लोग बिना किसी सरकारी सहायता की प्रतीक्षा के बगैर क्षेत्र के विकास कार्यों के लिए स्वयं ही जुट जाते थे। ऐसा ही निर्माण कार्य पचास के दशक के करीब पौड़ी जनपद के चौंदकोट तथा राठ क्षेत्र के ग्रामीणों ने स्वयं की सामूहिक श्रमशीलता एवं संसाधनों के बल पर 56 किमी0 मोटर मार्ग का निर्माण करके दिखाया। (नवानी/रावत, 2011: 302)

उत्तराखण्ड लोक निर्माण विभाग के 31 मार्च, 2010 के प्रतिवेदन से पूरे उत्तराखण्ड में यात्रा–पथ के निम्नलिखित आकड़ें प्राप्त होते हैं (नवानी/रावत, 2011: 293) –

यात्रा–पथ	पी0 डब्ल्यू0 डी0	अन्य	कुल
राष्ट्रीय राजमार्ग	1376 किमी0	773 किमी0	2149 किमी0
राज्य मार्ग	1575 किमी0	278 किमी0	1853 किमी0
प्रमुख जिला सड़कें	568 किमी0	82 किमी0	650 किमी0
अन्य जिला सड़कें	6827 किमी0	73 किमी0	6900 किमी0
ग्रामीण सड़कें	12376 किमी0	7609 किमी0	19985 किमी0
हल्का वाहन मार्ग	1101 किमी0	—————	1101 किमी0
कुल	**23823 किमी0**	**8815 किमी0**	**32638 किमी0**

अद्यतन उत्तराखण्ड लोक निर्माण विभाग के 31 मार्च, 2012 के प्रतिवेदन से पूरे उत्तराखण्ड में यात्रा–पथ के निम्नलिखित आकड़ें प्राप्त होते हैं (नवानी/रावत, 2015: 234) –

यात्रा–पथ	कुल
राष्ट्रीय राजमार्ग	2149 किमी0
राज्य मार्ग	4096 किमी0
प्रमुख जिला सड़कें	3414 किमी0
अन्य जिला सड़कें	3038 किमी0
ग्रामीण सड़कें	22081 किमी0
हल्का वाहन मार्ग	933 किमी0
कुल	**35711 किमी0**

निष्कर्ष रूप में यदि देखा जाए तो गढ़वाल क्षेत्र में यात्रा–पथ का विकास क्रमिक तरीके से शनैं–शनैं विकसित हुआ। पूर्व के समय में जहाँ इस ओर मानवीय गतिविधियाँ, व्यापार, आवागमन एवं संचार अत्यधिक सीमित था वहीं औपनिवेशिक एवं उत्तर–औपनिवेशिक काल में इसमें काफी बढ़ोत्तरी दर्ज की गई। ऐसा प्रतीत होता है कि उपरोक्त गतिविधियों के लिए यात्रा–पथ का अविकसित स्वरूप ही इसके लिए मुख्यतः उत्तरदायी था। जिस गति से औपनिवेशिक काल में यात्रा–पथ का विकास हुआ वैसा स्वरूप ऐतिहासिक काल के समय में देखने को नहीं मिलता। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि ऐतिहासिक काल में शासकों का स्थायित्वपूर्ण न होना, निरन्तर आपस में युद्धरत रहना, राजकोषीय रिक्तता एवं उनका निरंकुश स्वरूप जो प्रजा की अपेक्षा स्वयं पर किए जाने वाले व्यय के कारण पूर्णतः केन्द्रीकृत रूप में दिखाई पड़ता है। किन्तु औपनिवेशिक काल में यात्रा–पथ के विकास में उल्लेखनीय वृद्धि दृष्टिगोचर होती है। औपनिवेशिक शासन के दौरान विभिन्न प्रशासकों ने अपने शासकों एवं व्यक्तिगत लाभ के लिए यात्रा–पथ के निमार्ण में रूचि ली। गढ़वाल जैसे पर्वतीय भू–भाग में शासन–व्यवस्था पर पकड़ बनाए रखने,अंग्रेज प्रशासकों के लिए ग्रीष्मकाल में पर्वतीय आश्रय स्थल एवं वनों से प्राप्त होने वाले विभिन्न उत्पादों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाने के लिए यात्रा–पथ की अत्यन्त आवश्यकता महसूस की गई, जिस कारण से इनका विकास किया गया।

उत्तर–औपनिवेशिक काल में जहाँ चुनी हुई सरकारों पर यह दायित्व था कि वे गढ़वाल जैसे पर्वतीय भू–भाग में बसने वाली आबादी को मुख्य धारा में लाए, इसके लिए यात्रा–पथ का विकास अनिवार्य था। रोजगार के साधन, वनों का आर्थिक महत्त्व, पर्वतीय लोगों के लिए चिकित्सकीय सुविधाओं तक पहुँच एवं सामरिक दृष्टिकोण से अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं की सुरक्षा एवं सेना की जरूरतों को पूरा करने के लिए यात्रा–पथ का विकास एक नीतिगत जरूरत बन चुकी थी। विभिन्न सरकारी सड़क योजनाओं के अन्तर्गत भी गढ़वाल में सड़कों का निर्माण किया गया। सन् 2000 ई0 में शुरू किये गए' प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना' के अधीन गढ़वाल जैसे पर्वतीय भू–भाग में गाँवों को सड़कों से जोड़ने का महत्त्वपूर्ण प्रयास किया गया। गढ़वाल में तीर्थ–यात्रियों एवं श्रद्धालुओं के निरन्तर आगमन तथा अगाध श्रद्धा के फलस्वरूप यात्राकाल को और सुविधाजनक बनाने हेतु यात्रा–पथ का निरन्तर विकास किया गया। गढ़वाल के मुख्य मार्गों को आपस में जोड़ने के साथ ही उन लिंक मार्गों को भी इससे जोड़ने का कार्य किया गया जो दूर–दराज के ग्रामीण क्षेत्रों से सम्बद्ध थे। 9 नवम्बर 2000 ई0 को उत्तराखण्ड राज्य निर्माण के उपरान्त सम्पूर्ण उत्तराखण्ड के साथ ही साथ गढ़वाल में यात्रा–पथ के निर्माण में अभूतपूर्व वृद्धिदेखी जा सकती है। यात्रा–पथ के निर्माण की नीतिगत योजनाओं, पर्यावरण एवं आर्थिक पहलुओं पर राज्य सरकार के स्तर से नीति–निर्धारण ने इसे गतिशीलता प्रदान की है। बढ़ती आबादी और सड़कों पर बोझ डालने वाले यात्री और मालवाहक परिवहन आदि गतिविधियों के कारण एकल यात्रा–पथ को दोहरे यात्रा–पथ में परिवर्तित करने की जरूरत भी महसूस की गई। इसी के साथ सेना, सेना द्वारा प्रयुक्त किए जाने वाले विभिन्न सामरिक हथियारों, विविध जल–विद्युत परियोजनाओं में लगने वाले भारी मशीनरी आदि को निर्माणाधीन स्थलों तक पहुँचाने, जंगलात् आदि से प्राप्त लम्बे एवं अत्यधिक वजनी लकड़ियों तथा वन उत्पादों को स्थल परिवहन से ही एक स्थान से दूसरे स्थान तक तीव्रगति से पहुँचाया जा सकता है। अतः यात्रा–पथ का मात्रात्मक एवं गुणवत्तायुक्त निर्माण अत्यन्त आवश्यक है। इन्हीं सब मूलभूत आवश्यकताओं तथा विभिन्न आर्थिक, सामरिक एवं राजनैतिक गतिविधियों के कारण वर्तमान समय में भी गढ़वाल में यात्रा–पथ का निरन्तर विकास आधुनिक तकनीक के साथ जारी है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 – केदारखण्ड, 1994, अनुवादक – नौटियाल, एस0 एन0, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।
2 – सन्तराम, 1924, अलबरूनी का भारत, इलाहाबाद।
3 – ललितशूर देव का ताम्रपत्र – पाण्डुकेश्वर, एपिग्राफिया इंडिका – जि0 12।
4 – नवानी/रावत, 2010, विनसर उत्तराखण्ड ईयर बुक–2010, विनसर पब्लिशिंग कम्पनी, देहरादून।
5 – नेगी, शंतन सिंह, 1988, मध्य हिमालय का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली।
6 – कठौच, यशवंत सिंह, 2006, उत्तराखण्ड का नवीन इतिहास, विनसर पब्लिशिंग कम्पनी, देहरादून।
7 – अहमद, लईक, 2011, मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, शारदा पुस्तक भवन, पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, 11 यूनिवर्सिटी रोड, इलाहाबाद।
8 – डबराल, शिवप्रसाद, 1971, उत्तराखण्ड का इतिहास, भाग 4, वीरगाथा प्रकाशन, दोगड्डा, गढ़वाल।
9 – बर्नियर, एफ0, 1891, ट्रैवेल्स इन द मुग़ल एम्पायर, अनु0, विसेण्ट आर्थर स्मिथ, (पुनर्मुद्रण 1989), आटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।
10 – श्रीवास्तव, काशी प्रसाद, 2010, नेपाल का इतिहास, प्रकाशक, आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली।
11 – एटकिंसन, ई0 टी0, 2003, द हिमालयन गजेटियर, ग्रंथ–3, भाग–1 (अनु0 प्रकाश थपलियाल), उत्तराखण्ड प्रकाशन, हिमालय संचेतना संस्थान, आदिबदरी, चमोली।
12 – वाल्टन, एच0 जी0, 2006, देहरादून का गजेटियर, (अनु0 प्रकाश थपलियाल), उत्तराखण्ड प्रकाशन, हिमालय संचेतना संस्थान, आदिबदरी, चमोली।
13 – सांकृत्यायन, राहुल, 1953, हिमालय परिचय, खण्ड–1 (गढ़वाल), इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस, इलाहाबाद।
14 – बेंजवाल, रमाकान्त, 2002, गढ़वाल हिमालय, समाज, संस्कृति व यात्रा–पर्यटन का परिचयात्मक विवरण, विनसर पब्लिशिंग कम्पनी, दिल्ली।
15 – नवानी/रावत, 2011, विनसर उत्तराखण्ड ईयर बुक–2011, विनसर पब्लिशिंग कम्पनी, देहरादून।
16 – नवानी/रावत, 2015, विनसर उत्तराखण्ड ईयर बुक–2015, विनसर पब्लिशिंग कम्पनी, देहरादून।